क्रूरतम नरसंहार के सौ वर्ष (1919-2019) पर विशेष समीक्षा

जलियांवाला संघर्ष अभी ज़ारी है

लाहौर से लाल खान

1919 के उत्तरार्ध में, पंजाब के उपजाऊ मैदानों में हरे घास के मैदान सूरज की बढ़ती चमक के साथ एक सुनहरी हवा प्राप्त कर रहे थे। यह फ़सल के समय की शुरुआत थी। प्रदूषण की अनुपस्थिति के करीब एक सदी पहले, हवा ताजा होती। पकने वाली गेहूं की फ़सल की परिधि में सरसों के पीले चरागाहों के साथ, ताजे पत्ते की खुशबू के साथ वसंत की हवा के साथ।

सदियों से यह उन किसानों के लिये खुशी और उत्सव का मौसम था, जो पूरे साल अपने श्रम से इस मौसमी आजीविका की प्रतीक्षा करेंगे। यह उत्सव का समय था। उज्ज्वल पोशाक में पुरुष, महिलाएं और बच्चों के बच्चे उत्सव के मूड में थे। ड्रम बजाने और प्रेम और संतुष्टि के गीत गाने के साथ, रिवालर्स ने विशेष स्थानीय शराब पी और नृत्य किया। बैसाखी नाम का यह त्यौहार, आनन्ददायक और प्रत्याशित कटाई के उद्देश्य से मनाया जाता है। 1919 में, पंजाब का मुख्य बैसाखी समारोह 13 अप्रैल को अमृतसर के जलियांवाला बाग में आयोजित किया जाना था।

उस समय, भारत और पंजाब विशेष रूप से राजनीतिक तपस से प्रभावित थे। वसंत ने निकट और दूर से बदलाव की उम्मीद की लंबी हवायें लाई थीं। इन सबसे ऊपर 1917 में विजयी रूसी क्रांति ने क्षेत्र के युवाओं में अस्थिरता पैदा की। विद्रोही गदर पार्टी और उसके वीर संघर्ष ने राज के खिलाफ़ उनके संघर्ष में एक नई पीढ़ी को साहस और साहस की प्रेरणा दी। प्रथम विश्व युद्ध से लौट रहे भारतीय सैनिकों ने पहले हाथ की खबर और यूरोप और अन्य जगहों पर घूमने वाले क्रांतियों की जानकारी दी थी। युद्ध के अंत में, चावल, गेहूं, नमक और अन्य बुनियादी जरूरतों की कीमतें आसमान छू गई थीं। इसी तरह, राजनीतिक कार्यकर्ताओं की हिरासत के खिलाफ़ बड़े पैमाने पर रोप बढ रहा था। ये सभी कारक आबादी के बीच बढ़ती नाराजगी को जोड़ रहे थे।

ब्रिटिश साम्राज्यवाद के बुद्धिमान रणनीतिकारों को पूरी तरह से स्थिति के बारे में पता था और किसी भी संभावित विद्रोह को कुचलने के लिये अधिक दमनकारी उपायों को लागू करना शुरू कर दिया था। वे भारत पर रूसी क्रांति के संभावित प्रभाव से भी प्रभावित थे। पूर्ववर्ती उपाय के रूप में अराजक और क्रांतिकारी अपराध अधिनियम, 1919- या रोलेट एक्ट-को इंपीरियल लेजिस्लेटिव काउंसिल द्वारा मार्च 1919 में लागू किया गया था।

रविवार 13 अप्रैल को, सूर्योदय से बाग के एन्क्लेव में प्रवेश करने के लिये भीड़ शुरू हो गई थी। दोपहर तक, लगभग 20,000 लोग जलियांवाला बाग में एकत्रित हो गये थे। साम्राज्यवादी अत्याचारों, क्रांतिकारियों के निर्वासन, मूल्य वृद्धि और फ़ायरिंग के खिलाफ़ लगातार भाषण दिए गए। अधिकांश साधारण ग्रामीण थे जो सभी रंगों और रिवाज़ों के साथ बैसाखी मनाने के लिये अमृतसर आये थे।

लेकिन औपनिवेशिक अधिकारियों ने माना कि एक और विद्रोह आसन्न था और इसे क्रूर बल के साथ कुचलने की तैयारी शुरू हुई। अतिरिक्त सैनिकों और भारी शास्त्रागार को अमृतसर में लाया गया था। उस सुबह जर्नल रेजिनाल्ड डायर, जिसे ''ऑपरेशन'' का नेतृत्व करने के लिये सौंपा गया था, ने शहर के बीच से अपने सैनिकों को एक मार्च आयोजित किया था, यह घोषणा करते हुये कि किसी भी सभा को ''यदि आवश्यक हो तो हथियारों के बल से हटाया जाएगा''। गांव और कस्बों के दूर-दूर से जलियांवाला बांग में बैसाखी मनाने आये आम ग्रामीणों को यह पता नहीं था कि वास्तव में इन आदेशों का क्या मतलब है। सैनिकों ने सभा स्थल पर लोग़ों को इकट्ठा होने से रोकने या कार्यकर्ताओं को बैठक के लिये सड़कों पर ढोल बजाने से रोकने के लिये कोई प्रयास नहीं किया।

कार्यक्रम स्थल पर पहुंचने के बाद, जर्नल डायर ने बख्तरबंद कारों को मशीन गन के साथ जलियांवाला एन्क्लेव के बाहर छोड़ दिया क्योंकि इनके गुजरने के लिये गेट बहुत संकरा था। सैनिकों ने स्थिति संभाली। अभी भी एक विशाल बहुमत को विश्वास नहीं था कि उन्हें निकाल दिया जायेगा। खदेड़ने की कोई चेतावनी नहीं थी। गोलीबारी अचानक और बेरहमी से शुरू हुई। आधिकारिक रिपोर्टों के अनुसार, एक हज़ार छह सौ पचास राउंड फ़ायर किये गये, जिनमें 2,000 से अधिक घायल हैं।

वध करने के बाद, कर्नल डायर ने खुद का बचाव किया:''मेरा मानना है कि यह गोलीबारी की कम से कम मात्रा है जो आवश्यक नैतिक परिणाम देगी, और व्यापक प्रभाव...यह परिणाम लाना मेरा कर्त्तव्य था...यह अब केवल भीड़ को तितर-बितर करने का सवाल नहीं था; लेकिन एक पर्याप्त नैतिक प्रभाव पैदा करने में से एक...न केवल उन लोग़ों पर बल्कि पूरे पंजाब में विशेष रूप से आग और अधिकतम चोटों को भड़काना चाहिये, क्योंकि ब्रिटिश सेना को एक 'मूल' आबादी में भय का आवेश देना चाहिये।

ऐसा ब्रिटिश अधिकारियों का मानना था कि पंजाब के लेफ्टिनेंट गवर्नर माइकल ओ ड्वायर को 'सूचित' कर दिया गया था कि, ''रुसो-जर्मन बोल्शेविक संगठन रौलट विरोध के पीछे था तथा एक और उपनिवेश विद्रोह की योजना बना रहा था, जिसमें लाल झंडे को हर जगह एक ही समय में गर्म किया जाएगा। ''इससे औपनिवेशिक प्रशासकों के मान्यता को बल मिला, जिन्होंने कुचलने के लिये एक बड़ी ताकत इकट्ठा की।

इस साम्राज्यवादी बर्बरता के बहुत पहले, कार्ल मार्क्स ने भारत में ब्रिटिश शासन के बारे में लिखा था: ''बुर्जुआ सभ्यता का गहरा पाखंड और अंतर्निहित बर्बरता हमारी आंखों के सामने अनावरण की है, अपने घर से मुड़कर, जहां यह सम्मानजनक रूपों को स्वीकार करता है, जहां उपनिवेश हैं, जहां यह जाता है नग्न'' ।

लॉर्ड मैकाले 1834 और 1838 के बीच भारत के सर्वोच्च परिषद के एक प्रमुख सदस्य थे, जो भारतीय समाज और भाषाओं को साधारण और अवर मानते थे। मैकाले ने सभ्यता के उच्च बिंदु का प्रतिनिधित्व करते हुए अपने विचारों में दुनिया को सभ्य देशों और बर्बरता में विभाजित किया। मैकाले ब्रिटिश कब्जे से पहले भारत की आधिकारिक और शैक्षिक भाषा के रूप में फ़ारसी को खत्म करने में मुख्य नायक भी था। वह उपनिवेशों में शूरू किए गए शाही न्यायशास्त्र का मुख्य वास्तुकार था। 1857 के विद्रोह के बाद उपनिवेशों के लिए लगाए गए उनके न्यायशास्त्र को 1860 भारतीय दंड संहिता के नाम से जाना गया। यह न्यायशास्त्र अभी भी भारत, पाकिस्तान, सिंगापुर, श्री लंका, बांग्लादेश, नाइजीरिया, जिम्बाब्वे और अन्य पूर्व ब्रिटिश उपनिवेशों की कानूनी प्रणाली के रूप में प्रचलित है।

मैकाले ने उपमहाद्वीप में शिक्षा की पद्धति और व्यावसायिक प्रणाली को भी नष्ट कर दिया और इसे पश्चिमी शिक्षा के साथ बदल दिया और एक देशी एलीट का निर्माण किया जो ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन को बनाए रखने के लिये महत्वपूर्ण बफ़र और समर्थन होगा। उन्होंने लिखा, 'मुझे लगता है कि...लोग़ों ने शरीर को शिक्षित करने का प्रयास करने के लिये, हमारे सीमित साधनों के साथ यह हमारे लिये असंभव है। हमें वर्तमान में एक ऐसा वर्ग बनाने की पूरी कोशिश करनी चाहिये, जो हमारे और उन लाखों लोग़ों के बीच व्याख्याकार हो, जिन्हें हम रक्त और रंग में भारतीय मानते हैं, लेकिन स्वाद में विचारों में, नैतिकता और बुद्धि में, अंग्रेजी।'

विडम्बना यह है के औपनिवेशिक माफ़ी देने वाले जलियांवाला बांग को अन्यथा सौम्य शासन के लिये ''राक्षसी'' अपवाद के रूप में चित्रित करते हैं। यह क्रूरता अक्सर एक असाधारण खलनायक डायर द्वारा किए गए आकस्मिक कार्य के रूप में प्रस्तुत की जाती है। 8 जुलाई 1920 को ब्रिटिश संसदीय बहस में जलियांवाला बाग हत्याकांड पर बोलते हुये , विंस्टन चर्चिल ने कहा था, ''यह एक ऐसा प्रकरण है जो ब्रिटिश साम्राज्य के आधुनिक इतिहास में बिना किसी मिसाल के या समानांतर दिखाई देता है। यह उन त्रासदीपूर्ण घटनाओं में से किसी से पूरी तरह से अलग क्रम की एक घटना है, जो तब होती है जब सैनिकों को नागरिक आबादी के साथ टकराव में लाया जाता है। यह एक असाधारण घटना है एक राक्षसी घटना है, एक घटना है जो एक वचन और भयावह अलगाव में खड़ा है।'' चर्चिल का यह ब्रिटिश राज के अत्याचारी क्रूर चरित्र को एक सभ्य इकाई और डायर हत्याकांड के रूप में चित्रित करने का एक व्यर्थ और भ्रामक प्रयास था। एक अपवाद के रूप में। चित्रित करने का एक व्यर्थ और भ्रामक प्रयास था। एक अपवाद रूप में । जलियांवाला नरसंहार ब्रिटिश राज के प्रणालीगत नस्लवाद, श्रेष्ठता परिसरों और औपनिवेशिक क्रूर विशेषता का एक उत्पाद था।

1947 के बाद के, उपमाहाद्वीप के आधिकारिक इतिहासकारों और अभिजात्य प्रतिनिधियों ने इस संघर्ष के वर्ग सार के बजाय एक राष्ट्रवादी दृष्टिकोण से इस दुखद घटना को प्रस्तुत किया।

पाकिस्तान में, मुख्यधारा के आख्यानों में, 1947 में हुए खूनी विद्रोह के बाद जलियांवाला नरसंहार का उल्लेख ''भारतीयकृत'', सिख या विदेशी घटना है, जिसका पश्चिमी पंजाब में लोग़ों से कोई लेना-देना नहीं था। इस वीभत्स विभाजन ने जलियांवाला को ही दोहराया था। पूरे पंजाब में, इसके घास के मैदान, जलमार्ग और पानी निर्दोष रक्त से लथपथ हो गये। अंतिम विश्लेषण में पंजाब के धार्मिक नरसंहार, बलात्कार और तबाही की जिम्मेदारी पंजाबी शासक वर्गों पर पूरी तरह से निहित है। इन कुलीनों ने अंग्रेजों के जाने के बाद धन और शक्ति का अधिक लाभ पाने के लिये धर्म, संप्रदायवाद, जातीयता, जाति, पंथ और सांप्रदायिक पूर्वाग्रहों का इस्तेमाल साम्राज्यवादियों के इशारे पर नफरत फ़ैलाने के लिये किया था।

इस प्रलय में 1.7 मिलियन से अधिक लोग मारे गये और बीस लाख से अधिक अपने पैतृक गांवों और चूल्हों से उखड़ गये जहां वे असंख्य पीढियों से रह रहे थे। यह उन लोग़ों के खिलाफ़ ब्रिटिश साम्राज्यवादियों का क्रूर प्रतिशोध था, जिन्होंने गदर पार्टी से भगत सिंह के एचएसआरए (हिंदुस्तान सोशलिसट रिवोल्यूशनरी एसोसिएशन) तक अपने वीरतापूर्ण संघर्षों से राज को चुनौती देने की हिम्मत की थी। अंग्रेजों के खिलाफ़ कई विद्रोही आंदोलनों की पंजाब में अपनी उत्पत्ति और जड़ें थीं। यह लक्षित क्रूरता डुरंड लाइन के दोनों ओर के यूरोपीय कब्जेदारों और बंगाल और अन्य में उपनिवेशवादियों के खिलाफ़ अवज्ञा और विद्रोह के खिलाफ़ पश्तूनों का लड़ाई और पश्तूनों की लड़ाई के खिलाफ़ ब्रिटिश राज की प्रवृत्ति के समान थी।

भारत में, राष्ट्रवादी और धार्मिक समूह जलियांवाला त्रासदी को अपनी विशेष राजनीतिक प्रवृत्ति या संप्रदाय के खिलाफ़ एक हमले के रूप में पेश करते हैं जो कुछ शासक वर्गों के निहित स्वार्थों का प्रतिनिधित्व करता है। हिंदुत्ववादियों से लेकर कांग्रेस के धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवादियों ने इसे एक ऐसे प्रकरण के रूप में प्रस्तुत किया जो उनके पिछले संघर्ष और वैचारिक विरासत का हिस्सा था। कुछ सिख संप्रदाय इसे खालसा परंपरा में आई आपदा के रूप में परिभाषित करते हैं। यदि कोई एतिहासिक विकृतियों में कटौती कर सकता है, तो 1919 के आसपास की अवधि, विजयी बोल्शेविक क्रांति के मद्देनजर, उपमहाद्वीप में एक ज्वलंत और तीव्र युगीन समाजवादी और वर्ग संघर्ष का संकेत देती है।

जलियांवाला बाग सहित स्वतंत्रता संग्राम इस क्षेत्र के संघर्षशील वर्गों की विरासत है। राज ने अमृतसर के दो प्रमुख नेताओं, सेफुद्दीन किचलू और सत्य पाल को 1919 में उकसाया था। 13 अप्रैल को दुखद बैसाखी रैली उनकी रिहाई की मांग कर रही थी। साम्राज्यवादी दमन और उनकी रिहाई के लिये संघर्ष करने वाले प्रदर्शनकारियों का उनके धार्मिक विश्वासों से कोई लेना-देना नहीं था। वर्ग संघर्ष की उन तूफ़ानी घटनाओं में धार्मिक पहचान और पूर्वाग्रहों ने राजनीति पर हावी होना शुरू नहीं किया था।

औपनिवेशिक क्रूरताओं के ऐसे प्रकरणों के जलियांवाला हत्याकांड और मुख्यधारा के चित्रण का एक और पहलू है। उपनिवेशवाद के बाद के वर्षों में देशों के खिलाफ़ उपनिवेशवादी कुलीनता समान रूप से शातिर और निर्दयी साबित हुई है। इन अपस्टार्ट ने अपने औपनिवेशिक आकाओं के अत्याचारी शासन की ऐसी घटनाओं का इस्तेमाल किया है जो अपनी क्रूरता और निरंकुशता को कम करके अपनी 'राष्ट्रवादी, धार्मिक' और 'देशभक्तिपूर्ण' छवि का निर्माण करते हैं।

दक्षिण अफ्रीका में अगस्त 1912 में मरीकिना नरसंहार, 1960 में रंगभेद के तहत शार्पविले नरसंहार से कम क्रूर नहीं था। 1937 में , जापानी सेना ने नानकिंग नरसंहार या चीन में नानजिंग का बलात्कार किया, जिससे हज़ारों चीनी मारे गए जबकि 20 000 से 80 000 हज़ार महिलाओं का बलात्कार हुआ। लेकिन 1989 में, तियानमेन स्क्वायर की हत्या और हजारों प्रदर्शनकारियों को गिरफ़्तार करने के माध्यम से चीनी सैनिकों ने तूफ़ान ला दिया। जब हमला किया गया तो तियानमेन के प्रदर्शनकारी मज़दूर क्रांतिकारी इंटरनेशनल गा रहे थे। जिस शासन ने इस दमन का आदेश दिया, वह मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था को बहाल कर रहा था। पूर्व औपनिवेशिक राज्यों में ऐसे उदाहरणों की लंबी सूची है। दक्षिण एशिया में, औपनिवेशिक राज्यों ने इतने सारे तरीकों से राज के तहत शासन जारी रखा। शासकों का रंग, नस्ल, धर्म, नस्ल या लिंग बदल गया लेकिन शोषक व्यवस्था और पूंजीवादी राज्य का दमनकारी चरित्र बना रहा।

लोकतांत्रिक ढोंगों के बावजूद भारतीय शासक वर्ग दबे-कुचले वर्गों के खिलाफ़ निर्मम रहे हैं। 1928 में उपनिवेशिक शासन के सवाल पर, भगत सिंह ने अपने साथियों को व्याख्यान दिया था: ''हम स्वतंत्रता नहीं चाहते हैं। हम ऐसी स्वतंत्रता नहीं चाहते हैं जहां अंग्रेजी शासकों को स्थानीय ''भूरे'' कुलीनों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है। हम आज़ादी नहीं चाहते हैं जहां शोषण और गुलामी की यह विकट प्रणाली मेहनतकशों को परेशान करती रहे। ''तथाकथित आज़ादी से 20 साल पहले भगत सिंह ने खतरे को भांप लिया था और लार्ड मैकाले के शासन के खिलाफ़ लड़ाई शुरू कर दी थी। रक्त और रंग में भारतीय व्यक्तियों का एक वर्ग, लेकिन स्वाद में अंग्रेजी, विचारों में, नैतिकता और बुद्धि में।'' इस प्रत्यारोपित कुलीन वर्ग के सात दशक के इस नियम ने दुनिया की सबसे पुरानी और सबसे समृद्ध सभ्यताओं में से एक को तबाह कर दिया है।

पाकिस्तान में आम लोग़ों को असंख्य क्रूरताओं और दमन का सामना करना पड़ा, विशेष रूप से ज़िया सैन्य शासन के तहत, जिसने समाज को आघात पहुंचाया। श्रमिकों और वामपंथी कार्यकर्ताओं के खिलाफ़ अत्याचार के अलावा, सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन को प्रतिक्रिया के साथ जहर दिया गया था जो पाकिस्तान को अस्थिर रखने के लिये जारी है। 1978 में मुल्तान में कॉलोनी टेक्सटाइल मिलों के मज़दूरों का कत्लेआम और सिंध में 1983 का नरसंहार जलियांवाला नरसंहार के जघन्य सादृश्य हैं। 1947 के बाद के समय में बलूचिस्तान और अन्य क्षेत्रों में राज्य का संचालन ने एक औपनिवेशिक मानसिकता और आक्रामकता को दांव पर लगा दिया। तथाकथित लोकतांत्रिक शासन के दौरान जनता की पीड़ा कभी कम नहीं हुई। जलियांवाला संघर्ष जीत हासिल करने के लिये अभी तक प्रतीक्षारत है! संघर्ष को आगे बढ़ाना होगा!

भारतीय राज्य ने आज कई रौलट एक्ट का पुनः आविष्कार किया है। टाडा और पोटा के रूप में इस तरह के कानून किसी भी तरह से कम खतरनाक नहीं हैं। पंजाब से मणिपुर और तमिलनाडु से असम तक स्वतंत्रता के लिये संघर्ष करने वालों के खिलाफ़ ताकतवर भारतीय राज्य की सैन्य आक्रामकता, औपनिवेशिक जुझारूपन की प्रतिकृति थी। झारखंड की रूमानदार घाटी को एक बड़े पैमाने पर बदल दिया गया है। नरेन्द्र मोदी के तहत हिंदुत्व शासन लागू करने के बाद निहत्थे प्रदर्शनकारियों, भूमिहीन किसानों, दलितों, मज़दूरों, धार्मिक अल्पसंख्यकों और अन्य लोग़ों ने उग्र विरोध प्रदर्शन करने का साहस किया है। भारतीय लोकतंत्र गरीबों के लिये एक धोखा है और अमीर और पत्रकारी के शासन के लिये एक गैजेट है।